National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 2; May 2017; Page No. 121-124

मध्य गंगा घाटी एवं मध्य सोन घाटी के मध्य सांस्कृतिक समन्वय

डॉ0 देवेन्द्र प्रताप मिश्र

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग सी0 एम0 पी0 डिग्री कालेज, इलाहाबाद (इलाहाबाद विश्वविद्यालय) इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश भारत।

प्रस्तावना

विन्ध्य क्षेत्र के उत्तर में स्थित मध्य गंगा का मैदान जो मध्य पाषाणिक संस्कृतियों के अध्ययन के लिए विशेष महत्वपूर्ण है। विन्ध्य क्षेत्र की तुलना में मैदानी क्षेत्र प्राकृतिक दृष्टि से मानव आवास के लिए अधिक उपयुक्त है। जलवायु गत परिवर्तन पशु, जीवन और वनस्पति सम्पदा के वितरण को प्रभावित करता है। पुरातत्वविदों ने यह सुझाव दिया है कि परिवेश में हुए परिवर्तन के कारण मनुष्य को स्वयं परिवर्तित होने के लिए बाध्य होना पड़ा। भारत के मध्य पाषाण काल में जलवायुगत परिवर्तन के प्रमाण वीरभानपुर[1], लंघनाज[2], बागोर[3], आदमगढ़, टेरी स्थल तथा विन्ध्य क्षेत्र के कई स्थलों से प्राप्त हुए है। ये स्थल अलग–अलग पारिस्थितिकी क्षेत्रों में स्थित होने के कारण अलग–अलग जलवायु सम्बन्धि परिवर्तन के प्रमाण प्रस्तुत करते है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि इस युग में बड़े पैमाने पर विस्तृत क्षेत्र में जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन हुए। गुरूदीप सिंह, आल्चिन और अन्य विद्वानों ने राजस्थान, और उत्तर–पश्चिमी भारत में हेगड़े और मिश्रा[4] ने पर्यावरण सम्बन्धी जो अध्ययन किये है उनसे प्राप्त प्रमाणों से इस बात की पुष्टि होती है कि प्रारम्भिक नूतन काल में जलवायु अधिक आर्द्र थी। सांभर, डीडवाना, सीकर पुष्कर और लुंकरसर जिलों की झीलों में जमावों से उपलब्ध पराग प्रमाणों से पता चलता है कि 8000 ई0 पू0 में आर्द्रता आज की तुलना में अधिक थी। मध्य गंगा घाटी के मैदान में मध्य–पाषाणिक आखेटक और संग्राहक मानव किस तरह के पर्यावरण में रह रहा था? सम्भवतः प्रारम्भिक नूतन काल की जलवायु आज की तुलना में अधिक नम थी। इस क्षेत्र में जंगली वनस्पतियों का अनुमान किया जाता है। गंगा के मैदान में किये गये पराग विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस समय विस्तृत घास के मैदान रहे होंगे।

उत्तर प्रदेश के दक्षिणी पठारी भाग जिसमें वाराणसी जिले की चकिया तहसील, मिर्जापुर जिले का समस्त क्षेत्र, इलाहाबाद जिले की मेजा, करछना तथा बारा तहसील, कौशाम्बी जनपद और झांसी मंडल के लगभग समस्त जनपद का क्षेत्र, सम्मिलित है जो मध्य गंगाघाटी क्षेत्र के अन्तर्गत आते है। मध्य सोनघाटी जिसमें मुख्यतः मध्य प्रदेश के रीवा जनपद के आंशिक तथा सींधी जनपद का उत्तरी क्षेत्र आता है जिसे अध्ययन की सहजता की दृष्टि से विन्ध्य क्षेत्र भी कहते है। यहाँ समय–समय पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अन्वेषण उत्खनन और अनुसंधान के फलस्वरूप अनु:पुरापाषाणिक एवं मध्य पाषाणिक स्थल प्रकाश में आये हैं। मिर्जापुर में लगभग 50 स्थल मिले हैं जो मध्य पाषाण काल के हैं इनमें से मोरहना पहाड़, बघहीखोर और लेखहिया का उत्खनन भी किया जा चुका है। वाराणसी के चकिया तहसील में चन्द्रप्रभा नदी के किनारे अनेक स्थल प्रकाश में आयें हैं, जहाँ से मध्य पाषाणिक उपकरण मिले हैं। इलाहाबाद की मेजा तहसील में बेलन घाटी में चोपनीमाण्डों, कोल्डिहवा आदि अनेक स्थल मिले हैं। जिनमें से चोपनीमाण्डों का उत्खनन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त बांदा, हमीरपुर, झांसी एवं ललितपुर जिले से अनेक प्रकार के मध्य पाषाणिक पुरास्थल ज्ञात हुये हैं। लेकिन इनमें से किसी भी स्थल का उत्खनन नहीं किया जा सका है। उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणोंपकरणों का निर्माण चर्ट तथा चल्सेडनी पर मुख्यतः किया गया है। इसके अतिरिक्त कार्नेलियन अगेट, जैस्पर, क्वार्टज और क्वार्टजाइट पर भी इसका निर्माण मिलता है प्रमुख उपकरणों में कुंण्ठित तथा वक्र ब्लेड, छिद्रक, स्क्रैपर, बेधक, त्रिभुज, और चान्द्रिक आदि हैं। समस्त उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र की मध्य पाषाण कालिन संस्कृति को समझने के लिए उत्खनित स्थलों का विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया जा सकता है। किन्तु इससे पहले उस कालक्रम पर थोड़ा प्रकाश डालना यथोचित रहेगा जब पहली बार मानव का पदार्पण मध्य सोन घाटी (विन्ध्य क्षेत्र) से मैदानी भागों में हुआ, जिसे पुरातत्वविद्ो एवं इतिहासकारों ने 'अनु:पुरापाषाणकाल' की संज्ञा से अविभूत किया।

इस संस्कृति के अवशेष उच्च पूर्वपाषाण काल और मध्य पाषाण काल के संक्रमणात्मक स्थिति का द्योतन करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस काल के सांस्कृतिक अवशेषों को न तो उच्च पूर्व पाषाण काल में रखा जा सकता है और न ही मध्य पाषाण काल में। ये दोनों ही के मिले जुले रूप को दर्शाते हैं। इसीलिए पुरातत्वविदों नें इसे 'अनु:पुरापाषाणकाल' नाम दिया है। मध्य गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति[5] के प्रमाण अभी तक कुल छः स्थलों – वाराणसी में गढ़वा, इलाहाबाद में कूढ़ा एवं अहिरी, प्रतापगढ़ में सुलेमान पर्वतपुर, मन्दाह तथा साल्हीपुर से प्राप्त हुए हैं। ये सभी स्थल धनुषाकार झीलों अथवा इन झीलों से निकलने वाली नदियों के तट पर स्थित हैं[6]। इस संस्कृति के उपकरण एक प्रकार की कड़ी मिट्टी वाले जमावों में मिलते हैं। इनका भू–तात्विक धरातल फाफामऊ, इलाहाबाद के नजदीक गंगा के अनुभाग के तृतीय स्तर से संम्बन्ति है जिसे बेलन नदी अनुभाग के चतुर्थ ग्रेवल से समीकृत किया जाता है।

अनु:पुरापाषाणिक स्थलों से अत्यधिक मात्रा में पाषाणोपकरण प्राप्त हुए हैं। इन स्थलों पर पूर्ण निर्मित उपकरणों के साथ ही निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं से सम्बन्धित उपकरण क्रोड, फलक आदि की प्राप्ति होती है। इससे ऐसा जान पड़ता है कि इन उपकरणों का निर्माण इन्हीं स्थलों पर किया गया। मध्य गंगा घाटी में पाषाण–स्रोतों का अभाव रहा है। विन्ध्य क्षेत्र से पाषाण कालीन मानव प्रस्तर–खण्ड लेकर आता था, यहीं पर उपकरण बनाता था और उससे आखेट करता था। विन्ध्य क्षेत्र में हुए जलवायु व परिवेश में परिवर्तन तथा तत्कालीन आबादी में वृद्धि मध्य गंगा घाटी में उनके आव्रजन का मुख्य कारण रहा होगा। इस संस्कृति के किसी भी स्थल का अभी तक उत्खनन नहीं हो सका है। इन स्थलों की सतह से जो उपकरण एकत्र किये गये हैं, वे सभी चर्ट पर निर्मित हैं तथा उन पर अत्यधिक काई लगी हुई है। उपकरण प्रकारों में समान्तरबद्ध काले ब्लेड, भूथडे ब्लेड, तक्षणी, नोंक, खुरचनी, अर्द्धचन्द्र आदि का उल्लेख किया जा सकता है[7]।

इस संस्कृति के उपकरणों का निर्माण विभिन्न रंगों– काले, लाल, पीले, और सफेद चर्ट पत्थरों पर किया गया है। कुछ उपकरण चैल्सिडनी पर भी बने हुए प्राप्त हुए हैं। पूर्णतः निर्मित और प्रयुक्त उपकरणों के साथ–साथ कोर एवं फलक की उपस्थिति के आधार पर कहा जा सकता है कि इन उपकरणों का निर्माण व प्रयोंग इन्हीं स्थलों पर किया गया था क्योंकि गंगा के मैदान में इन पत्थरों का मूल स्रोत

नहीं था। इसलिए कोर से तब तक ब्लेड निकाला गया जब तक वह अत्यन्त छोटे नहीं हो गये। पूर्णतः निर्मित उपकरणों में पुनर्गठित ब्लेड, भूथड़े ब्लेड, छिद्रक, ब्यूरिन, स्क्रेपर, और अर्द्धचन्द्र सम्मिलित हैं। उपकरणों के अतिरिक्त पाषाण पुरासामग्री में ब्लेड, फलक, कोर, पुनरूज्जनित फलक और चिप्स का उल्लेख किया जा सकता है। चूँकि ये उपकरण वर्तमान धरातल के ऊपर से प्राप्त हुए हैं, इसलिए उन पर अत्यधिक काई लगी हुई है तथा ये अधिकांशतः खण्डित अवस्था में हैं। इन उपकरणों से संबन्धित जमाव की मोटाई अधिक नहीं है। अस्तु प्रतीत होता है कि ये स्थल अस्थायी अथवा ऋतुनिष्ठ आवास के निमित्त ही प्रयुक्त किये गये थे। इन स्थलों से जैविक अवशेष भी नहीं उपलब्ध हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रातिनूतन काल के अंत और नूतन काल के प्रारम्भ में मानव जनसंख्या में वृद्धि और विन्ध्य क्षेत्र की शुष्क जलवायु, भोजन और पानी की कमी के कारण पाषाण युगीन मानव को गंगा और यमुना जैसी बड़ी नदियों को पार करके गंगा के मैदान में आना पड़ा, जिसके प्रमाण अनुःपुरापाषाण काल के ये स्थल प्रस्तुत करते हैं[14]। प्रारम्भ में मानव का प्रवजन ऋतुनिष्ठ रहा होगा। किन्तु आगे चलकर गंगा के मैदान की वन–सम्पदा और झीलों एवं नदियों के हरे–भरे होने तथा यहाँ की वानस्पतिक एवं जैविक संम्पदा की प्राचुर्यता के प्रति आकर्षण एवं अनुकूलन के कारण मनुष्य यहाँ स्थायी रूप से बसने के लिए उन्मुख हुआ। यही कारण है कि अनुःपुरापाषाण काल में हमें स्थायी आवास के प्रमाण नहीं मिलते हैं[15]।

विन्ध्य क्षेत्र में बेलन नदी के तट पर स्थित एक पुरास्थल चोपनीमाण्डो का उत्खनन किया गया है[8]। इस स्थल की प्रथम संस्कृति अनुःपुरापाषाण काल की है अर्थात उच्च पूर्व पाषाण काल और मध्य पाषाण काल के संक्रमण काल की है। इसी काल के मानव ने सर्वप्रथम गोलाकार झोपड़ियों का निर्माण कर उसे आवास के रूप में अपनाया। मध्य गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति ने पाषाण कालीन मानव के ऋतुनिष्ठ प्रव्रजन का भारतमें प्राचीनतम् प्रमाण प्रस्तुत किया। विन्ध्य क्षेत्र की सूखे की विभीषिका से बचने के लिए मनुष्य जीविका की तलाश में नदी घाटियों को पार करता हुआ उत्तर की तरफ आया, संभवतः उसका इस क्षेत्र में आगमन नितांत अल्पकालिक होता था। अनुकूल मौसम में वह पुनः अपने मूल क्षेत्र में लौट जाया करता था[9]। इस काल के उपकरणों के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि इस संस्कृति से संबन्धित गंगाघाटी के उपकरण विन्ध्य क्षेत्र के उपकरणों की अपेक्षा छोटे हैं। उपकरणों की यह आकारगत न्यूनता मध्य गंगा घाटी में प्रस्तर पिण्डों की अनुपलब्धता के कारण थी। मानव ने इसकी महत्ता को ध्यान में रखकर तब तक उपकरण निर्माण किया जब तक ये अत्यन्त छोटे नहीं हो गये[10]।

मध्य पाषाणिक पुरास्थलों में सर्व प्रथम मिर्जापुर जिलों के उत्खनित स्थलों मोरहना पहाड़, बघही खोर और लेखहिया का उल्लेख किया जा सकता है। मोरहना पहाड़ मिर्जापुर जिले के भैसोर गाँव से लगभग 5 कि0 मी0 की दूरी पर दक्षिण की ओर सड़क के किनारे अवस्थित है। इसका उत्खनन सन् 1962–1964 ई0 तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग द्वारा कराया गया। यहाँ पर शिलाश्रय संख्या 4 और 1 के क्रमशः अन्दर और बाहर एक–एक खन्तियाँ डाली गयी। शिलाश्रय संख्या 4 अन्दर कुल 55 से0 मी0 मोटा जमाव प्रकाश में आया जिसे चार विभिन्न स्तरों में विभाजित किया गया है। शिलाश्रय के बाहर जो खन्ती डाली गयी वहाँ 1.13 मी0 मोटा सांस्कृतिक जमाव प्रकाश में आया जिसे छः स्तरों में विभक्त किया गया। जिसमें प्रथम पाँच स्तर से मध्य पाषाणिक लघु पाषाण उपकरण मिले है। इन स्तरों में कुछ से ज्यामितीय तथा कुछ से अज्यामितीय उपकरण मिले है। तथा कुछ स्तरों से (I, II) हस्त निर्मित मृदभाण्ड के टुकड़े और छोटे लघुपाषाण उपकरण हैं। पाषाण उपकरणों में कुण्ठित ब्लेड, चान्द्रिक, बेधक, स्क्रैपर आदि प्रमुख है,किन्तु छठे स्तर से किसी प्रकार के पुरावशेष नही मिले हैं।

मिर्जापुर जिले का महत्वपूर्ण मध्य पाषाणिक स्थल बघहीखोर है जो मोरहना पहाड़ के पास ही अवस्थित है। इस स्थल का उत्खनन डॉ0 राधाकान्त वर्मा[11] ने कराया यहाँ पर शिलाश्रय संख्या 1 में 12x6 फीट की एक खन्ती डाली गयी जिसमें 55 से0 मी0 मोटा जमाव (मध्य पाषाणिक) प्रकाश में आया जिसे चार स्तरों में विभाजित किया गया है। यहाँ पर विभिन्न स्तरों से सांस्कृतिक अवशेष मिले हैं यद्यपि वे काफी कुछ मोरहना पहाड़ के अवशेषों से साम्य रखते है। फिर भी इनमें एक निश्चित विकासात्मक क्रम परिलक्षित होता है। यहाँ का सबसे निम्नतम चतुर्थ स्तर है जिसकी मोटाई 3.5 इंच है। यह पत्थर की चिप्पियों, राख तथा राख मिश्रित मिट्टी से निर्मित थी। इस जमाव से चर्ट के बने अज्यामितिय प्रकार के लघुपाषाणोंपकरण मिले है[12]। फलकों पर बने उपकरणों की संख्या अधिक है। इस स्तर से मिट्टी के बने बर्तनों का अभाव है। प्रमुख उपकरण प्रकारों में ब्लेड, फलक, बेधक, चान्द्रिक तथा कोर प्रमुख है। तृतीय स्तर महीन बलुई मिट्टी से निर्मित है इसकी औसत मोटाई 7.5 से0 मी0 है। इस स्तर से समानान्तर पार्श्व वाले तथा कुण्ठित ब्लेड, चान्द्रिक, बेधक और क्रोड आदि पुरावशेष मिले हैं। द्वितीय स्तर से ज्यामितीय और अज्यामितीय दोनो तरह के उपकरण प्राप्त हुए। ये उपकरण यद्यपि प्रकार में पुराने ही हैं लेकिन इनका आकार अपेक्षाकृत छोटा है। प्रथम स्तर की मोटाई 1 इंच थी, यह नियमित सख्त गहरे रंग का जमाव था इस स्तर से जो उपकरण प्राप्त हुए हैं वे आकार में बहुत छोटे हैं। और अधिकांशतः लघुपाषाणोपकरण चाल्सेडनी पर निर्मित हैं[13]। इस स्तर से मिट्टी के बर्तन के नमूने अपेक्षाकृत अधिक मिले हैं। सबसे उपर लौहे के बाण और लोहे का एक टुकड़ा भी मिला है। मिट्टी के बर्तनों के नमूने तृतीय और द्वितीय स्तर से मिले है। जिसमें द्वितीय स्तर पर मिले मृद्भण्ड के टुकेड़े चाक पर बनाये गये प्रतीत होते हैं।

बघहीखोर के उत्खनन से एक विस्तीर्ण शवाधान स्तर दो के नीचे मिला है[14]। जिसके लिए तीसरे तथा चौथे स्तर को काटते हुए एक कब्र का निर्माण किया गया था। कब्र को बनाते समय आधारशीला को इस प्रकार काटा गया था कि कंकाल के सिर और पैर का भाग अपेक्षाकृत ऊँचाई पर और कमर का भाग नीचे स्तर पर था। कंकाल का सिर पश्चिम व पैर पूर्व दिशा की तरफ था। कंकाल के साथ लघु पाषाणोपकरण मिले हैं जिन्हे सम्भवतः समाधि सामग्री के रूप में रखा गया था। पूरा कंकाल पत्थर के छोटे–छोटे टुकड़ों से ढ़का हुआ था। नृतत्वशास्त्री आर0 एन0 गुप्ता ने इसे एक युवती का कंकाल माना है तथा इसकी लम्बाई 152.68 से0 मी0 है। डॉ0 आर0 के0 वर्मा ने उपकरण प्रकार के आधार पर इस स्थल के विषय में विकासात्मक दृष्टि से निम्नलिखित बाते कहीं है– 1. प्रथम अवस्था में अज्यामितीय उपकरणों का विकास हुआ जिसका सम्बन्ध मृदभाण्डों से नहीं था। 2. द्वितीय अवस्था में सीमित ज्यामितीय उपकरणों का विकास हुआ। 3. इस अवस्था में हस्तनिर्मित मृद्भांड प्रयोग मे लाये जाने लगे। 4. इस अवस्था में उपकरणों का आकार अपेक्षाकृत छोटा हो जाता है। इस स्थल की तिथि अभीतक ज्ञात नहीं सकी है[15]।

मिर्जापुर जिले में भैसोर के ही पास तीसरा उत्खनित स्थल लेखहिया है[16]। इस स्थल का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रोफेसर वी0 डी0 मिश्र ने स्व0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन में कराया यहाँ पर स्थित पाँच शिलाश्रयों में से प्रथम दो को उत्खनन के लिए चुना गया। शिलाश्रय 1 में 6.20x3.10 मीटर की खन्ती डाली गयी जिसमें 48 से0 मी0 मोटा सांस्कृतिक जमाव प्राप्त हुआ जिसे चार स्तरों में विभाजित किया गया। शिलाश्रय 2 के खुले क्षेत्र में 7x3 मीटर आकार की खन्ती डाली अयी जिसमें 1.10 मीटर मोटा सांस्कृतिक जमाव प्रकाश में आया जिसे 9 स्तरों में विभाजित किया गया है। इन स्तरों से प्राप्त पाषाण उपकरण ज्यामितीय और अज्यामितीय दोनों हैं। मृद्भांड के अवशेष भी प्राप्त हुए है। उपकरण प्राप्ति प्रकार के आधार पर इसे चार श्रेणियों में विभाजित किया गया है। 1. प्रथम श्रेणी में उनस्तरों के वे उपकरण

आते हैं जिनसे अज्यामितीय मृद्भाण्ड रहित उपकरण मिलते हैं। 2. द्वितीय प्रकार में वे स्तरित उपकरण जो ज्यामितीय हैं लेकिन उनके साथ मृद्भंण्ड नहीं मिलते है। 3. तृतीय श्रेणी में वे उपकरण रखे जा सकते है जो ज्यामितीय हैं तथा जिनके साथ मृद्भांण्ड भी मिले हैं। 4. ऐसे उपकरण जो अत्यन्त छोटे हैं तथा जिनके साथ मृद्भाण्ड भी मिले हैं। इस प्रकार उपरोक्त विवरण प्रकार को देखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि विन्ध्य क्षेत्र में लघुपाषाण उपकरणों का एक विकासात्मक क्रम परिलक्षित होता है। उपकरण उत्तरोत्तर छोटे होते जाते हैं तथा इनमें तीक्ष्णता आती जाती है। यद्यपि प्रथम दो चरणों से मिट्टी के पात्र नहीं मिलते है लेकिन कालान्तर में पूर्व नव पाषाणिक स्तर के लोगों के सम्पर्क में आने के फलस्वरूप मध्य पाषाणिक संस्कृति के लोगों ने हाँथ से बने मृद्भाण्डों का उपयोग प्रारम्भ कर दिया[17]।

लेखहिया के शिलाश्रय संख्या 1 से मध्य पाषाणिक लघुपाषाणोंपकरणों के अतिरिक्त 17 मानव कंकाल प्राप्त हुए हैं। जिनमें से कुछ सुरक्षित तथा कुछ क्षत–विक्षत स्थिति में हैं[18]। इनमें अधिकांश के विस्तीर्ण शवाधान हैं। कंकाल 2 और 12 को छोड़कर शेष सभी के सिर पश्चिम की ओर तथा पैर पूर्व की ओर कब्र में चित्त लिटाया गया था। कंकाल संख्या 2 का सिर दक्षिण की ओर तथा कंकाल संख्या 12 का सिर उत्तर की ओर था। अधिकांश कंकाल वयस्कों के तथा एक बच्चे का है। 13 कंकालों की अबतक पहचान की जा चुकी है जिनमें 10 पुरूष और 3 स्त्री के हैं। कुछ कंकालों जिनमें 2 और 5 के साथ अन्त्येष्टि सामग्री के भी प्रमाण मिले हैं। जिसमें पशुओं की हड्डियाँ घोंघा और हिरण की सींग मिली हैं। सभी नर कंकालों के साथ बड़ी संख्या में पूर्णनिर्मित तथा अर्द्धनिर्मित पाषाणोंपकरण मिले हैं।

लेखहिया के तिथिक्रम के विषय में कोई निश्चित जानकारी नही मिलती। सापेक्ष तिथिक्रम के कोई सही और प्रामाणिक साक्ष्य अभी नहीं ज्ञात है[19]। यहाँ से मिली जली हुई हड्डियों के दो असंशोधित c-14 तिथियाँ प्राप्त हुई हैं[20]– TF-419-2410±115B.CऔरTF&417-1710±910B.C.।

उत्तरी विन्ध्यक्षेत्र का अगला उत्खनित मध्यपाषाणिक स्थल चोपनीमाण्डों है। जो इलाहाबाद जिले में नगर से 77 कि0 मी0 दक्षिण–पूर्व की दिशा में बूढ़ी बेलन नदी के बायें तट पर स्थित है। इस पुरास्थल को खोजने का श्रेय इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रोफेसर वी0 डी0 मिश्र को है[21]। इसका उत्खनन 1978–82 ई0 में श्री वी0 डी0 मिश्र ने प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन में कराया यह विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ एक मध्य पाषाणिक पुरास्थल है जिसका क्षेत्रफल 15000 वर्ग मीटर है। इस स्थल का उत्खनन विस्तृत पैमाने पर क्षैतिज विधि से किया गया। उत्खनन के लिए 5x5 मीटर की 21 खन्तियाँ लगाई गयी जिसका उत्खनन 35–30 से0 मी0 तक किया गया। कुछ के उत्खनन को 60–80 से0 मी0 की गहराई तक ले जाया गया। चोपनीमाण्डों के उत्खनन के फलस्वरूप जो सामग्रीयाँ प्राप्त हुयी है उसे तीन सांस्कृतिक उपकालों में विभाजित किया गया है– 1. अनःपुरापाषाण काल 2. अ. आारम्भिक मध्यपाषाण काल, ब. प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल तथा 3. विकसित मध्य पाषाण काल[22]।

अनःपुरापाषाण काल चोपनीमाण्डो के दसवें और अन्तिम स्तर से 20 से0 मी0 मोटे जमाव में मिलता है। इस स्तर के उपकरण परवर्ती उपकालों के लघुपाषाण उपकरणों की तुलना में बड़े हैं। इन उपकरणों में समतान्त पार्श्व वाले ब्लेड कुण्ठित पार्श्व वाले ब्लेड, खुरचनी तथा क्रोड और फलक है। ये उपकरण काफी बड़े है। जिससे ऐसा लगता है कि ये उसकाल के हैं जब उच्च पुरापाषाण काल और मध्य पाषाण काल का संक्रमण काल चल रहा था[23]।

प्रारम्भिक मध्य पाषाण काल (अ) का द्योतन चापनीमाण्डो के नवें और आठवें स्तर से होता है। इसकाल के उपकरण अज्यामितीक तथा चर्ट पत्थर पर बने हैं। इन उपकरणों में बेधक, खुरचनी, कुण्ठित और समानान्तर पार्श्व वाले ब्लेड प्रमुख है। यह 40 से0 मी0 मोटा जमाव है। इसकाल के उपकरण अपेक्षकृत छोटे हैं और इनके निर्माण में चर्ट तथा चाल्सेडनी का प्रयोग किया गया है। इस स्तर से मिट्टी के उपकरणों का अभाव है। अनेक प्रकार के ज्यामितीय ब्लेड जिनमें त्रिभुज, चतुर्भुज आदि उल्लेखनीय है। इस उपकाल में पाँच गोलाकार झोपड़ियों के साक्ष्य मिले हैं[24]। जिनका व्यास 3 मीटर है तथा इनके आस–पास बहुसंख्यक लघुपाषाण उपकरण तथा छोटे–छोटे पत्थरों के टुकड़े बिखरे हैं।

विकसित मध्य पाषाण काल अथवा आद्य नव पाषाणकाल तीसरे से लेकर प्रथम स्तर तक 40 से0 मी0 के मोटे जमाव में मिलता है। इस स्तर से ज्यामितीय लघु उपकरणों के साथ हस्त निर्मित मृद्भाण्ड मिले हैं। उपकरण प्रकारों में बेधक, चान्द्रिक, चतुर्भुज आदि नये हैं तथा कुछ पुराने उपकरण छोटे प्रारूप में मिले है। यहाँ पर 13 झोपड़ियों के आधार के विषय में जानकारी मिली हैं। जिनमें छः गोलाकार तथा शेष अण्डाकार हैं। सम्भव है कि चोपनीमाण्डों के लोग बांस–बल्ली तथा घास–फूस की झोपड़ियाँ बनाकर रहते थे झोपड़ियों के आस–पास अनेक प्रकार के छोटे–बड़े प्रस्तर उपकरण और उनके अवशेष उपलब्ध हुए हैं। जो निहाई, हथौड़े, गदाशीर्ष सिल–लोढ़े आदि हैं। इस उपकाल से हस्तनिर्मित मृद्भाण्ड मिले हैं जो अत्यन्त क्षत–विक्षत अवस्था में हैं। पकावट अच्छी नही है, इनके निर्माण में पुआल और भूँसी के प्रयोग की सूचना मिलती है। पात्र प्रकारों में कटोरे और कलश प्रमुख हैं। अनेक पात्र खण्डों पर ठप्पे के द्वारा डिजाइन बनाने के अवशेष मिले हैं। वर्तनों के चमकाने के भी साक्ष्य मिलते हैं।

चोपनीमाण्डो से अभी तक रेडियों कार्बन तिथियाँ नही प्राप्त हुईं हैं कालानुक्रम निर्धारण सापेक्ष विधि से पुरातात्विक् आधार पर किया जा सकता है। इसकी सापेक्ष तिथि 17000 से 7000 ई0 पू0 निर्धारित की गयी हैं[25, 26]।

इस प्रकार देखा जाय तो उत्तरी मध्य सोन नदी घाटी (विन्ध्य क्षेत्र) के मध्य पाषाण कालीन मानव में एक विकासात्मक प्रवृत्ति दिखयी पड़ती है। हम देखते हैं कि जहाँ पूर्व पाषाण कालीन मानव का जीवन पूर्णतः संचरणशील था वह मात्र कन्दमूल फल और जैविक आहार पर ही निर्भर था किन्तु अनःपुरापाषाण काल में मैदानी क्षेत्र के सम्पर्क में आने से घास के दानों की जानकारी हुई और एकत्र करने या रखने के लिए उसे मृद्भाण्डों की आवश्यकता हुई जिसका वह निर्माण किया। धीरे–धीरे वह अपने रहन–सहन और उपकरण प्रकारों में नवीनता ला रहा था तथा साथ ही साथ अपने आवास को स्थायी रूप देने में प्रयत्नशील था। इन स्थलों के अतिरिक्त अनेक स्थल प्रकाश में आये हैं। जिसके उत्खनन से भविष्य में मध्य सोन घाटी और मध्य गंगा घाटी के मध्य सांस्कृतिक सम्बन्धों पर और विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. लाल, बी0 बी0 1958, वीरभानपुर, ए माइक्रोलिथिक साइट इन द दामोदर वैली, वेस्ट बंगाल, एन्शिएण्ट इण्डिया नं0 14।
2. स्कालिया, एच0 डी0 1965, एक्सकवेशन एट लंघनाजः 1944–63, पार्ट 1, आर्कियोलॉजी, डेकन कालेज, पूना।
3. मिश्र, वी0 एन0 1973, बागोरः ए लेट मेसोलिथिक सेटेलमेंट इन नार्थ वेस्ट इण्डिया, वर्ल्ड आर्कियोलॉजी, वाल्यूम 1, पेज 92–110।
4. मिश्र, वी0 एन0 1973, बागोरः ए लेट मेसोलिथिक सेटेलमेंट इन नार्थ वेस्ट इण्डिया, वर्ल्ड आर्कियोलॉजी, वाल्यूम 1, पेज 92–110।
5. पाल, जे0 एन0 1984, इपी–पैलियोलिथिक साइट्स इन प्रतापगढ़ डिस्ट्रिक, उत्तर प्रदेश, मैन एण्ड इनवार्यनमेंट, वाल्यूम 8, पेज 37–38।
6. पाल, जे0 एन0 1984, इपी–पैलियोलिथिक साइट्स इन प्रतापगढ़ डिस्ट्रिक, उत्तर प्रदेश, मैन एण्ड इनवार्यनमेंट, वाल्यूम 8, पेज 37–38।

7. पंत, डी0 डी0 और पंत, रेखा 1980, प्रिलिमिनरी आबजरवेशन आन पोलेन फ्लोरा आफ चोपनी माण्डो (विन्ध्याज) एण्ड महदहा (गंगा वैली)।
8. शर्मा, जी0 आर0, मिश्रा, वी0 डी0 मण्डल, डी0, मिश्रा बी0 बी0 और, जे0 एन0 पाल 1980, बिगनिंग्स ऑफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद, पेज 229–230।
9. पाण्डेय, जे0 एन0 1985, सेटेलमेंट पैटर्न एण्ड लाइफ इन द मैसोलिथिक पीरिएड इन यू0 पी0, अप्रकाशित डी0 फिल्0 शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।
10. पाण्डेय, जे0 एन0 1985 पूर्वोक्त।
11. पाण्डेय, जे0 एन0 1985 पूर्वोक्त।
12. शर्मा, जी0 आर0 व मिश्र, बी0 बी0 1980, इक्सकवेशन एट चोपनी माण्डो।
13. शर्मा, जी0 आर0 1973, मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गंगा वैली, इण्डिया, प्रोसीडिंग्स आफ द प्रीहिस्टोरिक सोसायटी 39, पेज 129–146; शर्मा जी0 आर0 1975, सीजनल माइग्रेशन एण्ड मेसोलिथिक कल्चर आफ द गंगा वैली, के0 सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम, इ0 वि0 वि0, इला0 पेज 1–120।
14. शर्मा, जी0 आर0, मिश्र, वी0 डी0 और पाल, जे0 एन0 1980, एक्सकवेशन एट महदहा, इ0 वि0 वि0, इला0; पाल, जे0 एन0 1992, बरियल प्रैक्टिसेज एण्ड आर्कियोलॉजिकल रिकवरी, केनेडी के0 ए0 आर0, लुकास जे0 आर0, पास्टर, आर0 एफ0 जोस्टर, टी0 आई0, लोवेल, एन0 सी0 आदि।
15. शर्मा, जी0 आर0 1973, स्टोन एट इन द विन्ध्याज एण्ड द गंगा वैली, रेडियो कार्बन डेड्स एण्ड इण्डियन आर्कियोलोजी (सम्पा0) अग्रवाल, डी0 पी0 और घोष, ए0, पेज 106–108।
16. शर्मा, जी0 आर0 1973, पूर्वोक्त, पेज 120–130।.
17. शर्मा, जी0 आर0 1975, पूर्वोक्त, पेज 5–6.
18. शर्मा, जी0 आर0 1975, पूर्वोक्त, पेज 9.
19. शर्मा, जी0 आर0 1978, प्रागैतिहासिक मानव की कहानीः गंगा घाटी की प्राचीन संस्कृति पर नया प्रकाश, दिनमान, भाग–14, अंक–34, 20 से 26 अगस्त, 1078, पेज–24.
20. शर्मा, जी0 आर0 और अन्य 1980, फ्राम हण्टिंग गैदरिंग टू फूड प्रोडक्शन एण्ड डोमेस्टीकेशन आफ एनीमल्सः एक्सकवेशन्स एट चोपनी, माण्डो, महदहा एण्ड महगड़ा।
21. पाण्डेय, जे0 एन0 1985, पूर्वोक्त, पेज–163–170.
22. संकालिया, एच0 डी0 1965, एक्सकवेशन एट लंघनाज–1944–63, पार्ट–1, आर्कियोलॉजी।
23. जोशी, आर0 वी0 1978, स्टोन एज कल्चर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, पूनाः डेकन कालेज।
24. मिश्रा, वी0 एन0 1973, पूर्वोक्त।
25. मिश्रा, वी0 एन0 1973, पूर्वोक्त।
26. जोशी, आर0 वी0 1978, पूर्वोक्त।
27. मिश्रा, वी0 डी0 1996, हिस्ट्री एण्ड कान्टेक्स्ट आफ मैसोलिथिक रिसर्च एट इलाहाबाद युनिवर्सिटी, इलाहाबाद, भारत, कोलोकियम 33, फोरली, इटली, इण्टरनेशनल यूनियन आफ प्रीहिस्टॉरिक एण्ड प्रोटोहिस्टॉरिक साइंसेज के 13वें अधिवेशन के पुस्तिका में प्रकाशित; काजलें 1996, प्लाण्ट रिसोर्सेज एण्ड डायट एमंग द मैसोथिलिक हंटर्स एण्ड फोरेजर्स; थामस पी0 के0, जोगलकर पी0 पी0, मिश्रा वी0 डी0, पाण्डेय जे0 एन0 व पाल जे0 एन0 1996, फोनल इविडेंस फार द मैसोलिथिक फूड एकोनामी आफ द गंगेटिक प्लेन विद स्पेशल रिफरेंस टू दमदमा; पाल जे0 एन0 1996, लिथिल यूज वियर एनालिसिस एण्ड सबसिस्टेंस एक्टिविटीज एमंग द मैसोलिथिक पिपुल आफ नार्थ इण्डिया; पाण्डेय जे0 एन0 1996, बरियल प्रैक्टिसेज एण्ड फनरेरी प्रैक्टिसेज ऑफ मैसोलिथिक इण्डिया; कैनेडी ए0 आर0, केनथ 1996, स्केल्टल एडाप्टेशंस ऑफ मैसोलिथिक हण्टर–फोरेजर्स आफ नार्थ इण्डियाः महदहा एण्ड सरांय नाहर राय कम्पेयर्ड; लुकाश जान आर0, पाल जे0 एन0 और मिश्रा वी0 डी0 1996, 'क्रोनोलॉजी एण्ड डायट इन मैसोलिथिक नार्थ इण्डियाः ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आफ न्यू ए0 एम0 एस0 सी–14 डेट्स डी–13 जिस्टोप वैल्यूज एण्ड देअर सिग्नीफिकेंस; मिश्रा वी0 एन0 1996, 'मैसोलिथिक इण्डियाः हिस्ट्री एण्ड करेंट स्टेटस आफ रिसर्च; वर्मा आर0 के0 1996, सबसिस्टेंस इकोनॉमी आफ द मैसोलिथिक फाक एज रिफ्लेक्टेड इन टू राक पेंन्टिंग्स ऑफ द विन्ध्यन रीजन'।